टपकता हुआ छत

डॉ0 सुनील कुमार सिंह
एवं **जागृति गुप्ता**
असिस्टेंट प्रोफेसर, भूगोल विभाग
श्री महंथ रामाश्रय दास स्नातकोत्तर महाविद्यालय

बरसात की रात है, आसमान चीख रहा है,
बिजलियों की लकीरें जैसे किसी गरीब की हथेली पर भाग्यरेखाएँ खींच रही हों।
कच्चे घर की दीवारें थरथरा रही हैं,
और छत हाँ वही छत, जिसे पिता ने आधी मजदूरी बचाकर पुआल और मिट्टी से ढका था,
अब बूंद-बूंद टपक रही है।
एक-एक बूंद, बच्चों के तकियों पर गिरती है,
और माँ बार-बार उनकी चादरें बदलती जाती है।
बच्चा पूछता है 'अम्मा! छत क्यों रो रही है?'
अम्मा चुप हो जाती है,
बस आँगन में रखी बाल्टी को सिरहाने खिसका देती है।
बाल्टी भरती है, माँ की आँखें भी भरती हैं,
पर होठों पर करुणा का गीत है 'सो जा बेटा सुबह धूप आएगी तो सब ठीक हो जाएगा।'
रात ढलती है, पानी कम नहीं होता,
फिर भी माँ के शब्दों में अजीब-सी रोशनी है ।
वह जानती है यह छत भले ही टपक रही है,
पर यही छत उसके सपनों की छाँव है ।
यही छत है जिसके नीचे बच्चे क ख ग लिखना सीखते हैं ।
और यही छत है जिसके नीचे पिता भूखे रहकर भी भविष्य के लिए रोटी बचाते हैं ।
टपकती छत उन्हें हर साल आशा का पाठ पढ़ाती है,
कि हर बूँद के बाद एक नया सूरज ज़रूर उगेगा ।
सुबह होती है, बच्चे छत के नीचे भीगे पन्नों की किताबें उठाते हैं,
और पिता टूटी छत की ओर देखकर कहते हैं मत घबराओ,
हमारा घर गिरा नहीं है, अब भी खड़ा है और जब तक दीवारें खड़ी हैं, हम भी खड़े हैं ।'
यही विश्वास है जो मिट्टी के घर को महल से बड़ा बना देता है।
विश्वास कि एक दिन छत पक्की होगी, छत टपकेगी नहीं,
बल्कि बच्चों के सपनों को आसमान तक ले जाएगी।
गाँव की गलियों में नल का पानी टपकता है, स्कूल की खिड़कियाँ टूटी हैं,
पर बच्चे- भीगी स्लेट पर भी लिख लेते हैं,
'मैं डॉक्टर बनूँगा
मैं अध्यापक बनूँगा
मैं किसान का बेटा होकर देश को अन्न दूँगा।'
टपकती छत संभावनाओं का आकाश बन जाती है,
जहाँ हर बूँद एक सपना सींचती है।
छोटा-सा घर एक बड़े देश का आईना है,
जहाँ गरीबी है, पर उससे भी बड़ा साहस है।
बरसात हर साल आती है, छत हर साल टपकती है,
फिर भी इस घर के लोग टूटते नहीं ।
माँ हर साल कपड़े सुखाती है, बच्चे फिर से किताबें खरीदते हैं,
पिता मजदूरी से फिर बांस काट लाते हैं, क्योंकि वे जानते हैं,
छत का टपकना उनके जीवन का अंत नहीं बल्कि नई शुरुआत का संकेत है ।
आज भले ही छत से पानी गिरे, कल इसी पर सितारे चमकेंगे,
आज भले ही दीवारों में दरार है,
कल इन्हीं दीवारों पर उपलब्धियां टँगी होंगी ।
रात फिर से आएगी, बारिश फिर से गिरेगी,
पर अब बच्चे डरेंगे नहीं ।
वे सोचेंगे, 'अगर छत टपक रही है, तो क्या हुआ? हमारे पास छत तो है ।
और जब तक छत है, तो उम्मीद है ।'
इसलिए हर बूँद के साथ वे सपनों की नाव गढ़ते हैं,
हर टपकती दरार के साथ वे भविष्य की ईंट चुनते हैं।
टपकती हुई छत
सिर्फ़ कमजोरी नहीं है, वह ताक़त भी है,
जो सिखाती है कि
गरीबी झेलकर भी मनुष्य के सपने कभी टपकते नहीं,
बल्कि और गहरे आकाश की ओर उगते हैं ।
हाँ, अब भी लाखों घरों की छत टपकती है ।
पर हर टपकती छत के नीचे एक परिवार है,
जो आँसुओं से नहीं, आशा और विश्वास से जीता है।
टपकती छतें
शायद हमें दया माँगने पर मजबूर करती हैं,
लेकिन उन्हीं बूंदों में भविष्य की संभावना झलकती है कि,
एक दिन यह छत टपकेगी नहीं, बल्कि बुलंदियों पर पहुँच कर तारे की तरह जगमगाएगी ।
एक दिन...

***